(चौलुक्य) महाराजाधिराज श्रीदुर्लभराज के समय का
राष्ट्रीय संग्रहालय, दिल्ली का (वि०) सम्वत् १०६७ का
* दान-पत्र *

इस दानपत्र के सम्पादन का सौभाग्य मुझे इन्द्रप्रस्थीय राष्ट्रीय संग्रहालय के सौजन्य से प्राप्त हुआ है। दानपत्र दो ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण है जो किसी समय तार से जुड़े थे। इनके मिलने का स्थान अज्ञात है; परन्तु इनकी खरीद छापर (राजस्थान) के श्री बुधमल दुघोरिया से हुई थी, अतः बहुत सम्भव है कि ये राजस्थान या गुजरात से मिले हों। पत्र सुरक्षित हैं, और अक्षर प्रायः सुवाच्य हैं।

दोनों ताम्रपत्रों में दस-दस पंक्तियाँ हैं, और प्रत्येक पंक्ति में लगभग चौबीस अक्षर हैं। दोनों ही ताम्रपत्रों के उत्तरभाग के अक्षर पूर्वभाग के अक्षरों से कुछ मोटे हैं। लिपि तत्कालीन देवनागरी है। उस समय के व्यवहारानुसार प्रायः पृष्ठ मात्राओं का उपयोग किया गया है। **ब** के स्थान में **व** का ही प्रयोग है। एकाध सामान्य अशुद्धि भी है। पंक्ति ६ में **मत्त** को **मंत्त**, पंक्ति ७ में **तृण** को **त्रिण**, और पंक्ति १९ में **नुमतं** संभवतः **नुयं** के रूप में उत्कीर्ण है। पंक्ति १२ का **लोड्डयन** गोत्र शायद ठीक रूप में लाट्यायन हो। क्षत्रियपद दो स्थानों में क्षंत्रियपद्र रूप में उत्कीर्ण है। बहुत सम्भव है कि प्रचलित रूप में इसका उच्चारण सानुस्वार रहा हो। पहला ताम्रपत्र जिसकी संग्रहालय संख्या ६१. १५२८ है २१.१ × १२.२ सेन्टीमीटर का और दूसरा जिसकी संग्रहालय संख्या ६१.१५२९ है २०.९ × १२.५ सेन्टीमीटर का है।

लेख कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। यह दुर्लभराज चौलुक्य के समय का सर्वप्रथम प्राप्त अभिलेख है। 'प्रबन्धचिन्तामणि' के अनुसार मूलराज के उत्तराधिकारी चामुण्डराज ने संवत् १०५० से संवत् १०६५ तक राज्य किया। इसके बाद वल्लभराज ने पांच महीने और उन्तीस दिन तक राज्य किया। इसके छोटे भाई दुर्लभराज ने संवत् १०६५ से १०७७ तक राज्य किया। इसके विषय में 'द्वयाश्रयकाव्य' से हमें ज्ञात है कि उसका विवाह नड्डूलीय चौहान महेन्द्र की बहिन दुर्लभादेवी से हुआ था।

इस दानपत्र में निर्दिष्ट दान का दाता महाराजाधिराज श्री दुर्लभराज का तन्त्रपाल क्षेमराज था। उसने स्वमुक्त भिल्लमाल-मण्डल के अन्तर्गत क्षत्रियपद्ग्राम में आये हुए राजपुरुषों और ब्राह्मणादि-जातियों को जताया है कि सोमग्रहण के दिन स्नान और महादेव के पूजन के बाद उसने गोविन्द के पुत्र, माध्यंदिन वाजसनेयी शाखानुयायी लाट्यायन (?)– गोत्रीय भिल्लमाल वासी ब्राह्मण नन्नुक को भाग-भोग-उपरिकरादि सहित क्षत्रियपद् ग्राम प्रदान किया है। ग्राम की सीमा के अन्तर्गत काष्ठ, तृण, पूति, गौचर और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दशापराध के लिये दण्ड आदि भी इस दान में सम्मिलित थे। किन्तु पूर्व प्रदत्त देवदायों और ब्रह्मदायों पर नन्नुक का अधिकार वर्जित था।

लेख की तिथि संवत् १०६७ माघ शुक्ला पूर्णिमा है। इस तिथि का चन्द्रग्रहण अभिलेख में निर्दिष्ट ही है। अभिलेख के अन्त में दुर्लभराज की सही है।

इतिहास की दृष्टि से इस अभिलेख में कुछ बातें ध्यान देने योग्य हैं। मूलराज के अभिलेखों और उल्लेखों से यह प्रायः निश्चित है कि उसके राज्य के अन्तर्गत सारस्वत-मण्डल (जिसके अन्तर्गत पश्चिमी सरस्वती नदी पर स्थित अणहिल्लपाटक और उसके निकटस्थ अन्य स्थान थे), सौराष्ट्र का बहुत सा भाग, साँचौर के आस पास का प्रदेश आदि भाग थे।[1] हथूंडी के राष्ट्रकूटों के बीजापुर अभिलेख से यह भी सिद्ध है कि मूलराज ने (आबू के परमार राजा) धरणीवराह का उन्मूलन किया था। किन्तु इसका यह मतलब लगाना ठीक न होगा कि मूलराज ने आबू के परमार राज्य को सर्वथा नष्ट कर दिया। भिल्लमाल सांचोर से कुछ अधिक दूर नहीं है। किन्तु इसी धरणीवराह के पुत्र महाराजाधिराज देवराज परमार के संवत् १०५९ के रोपी अभिलेख से सिद्ध है कि उस समय तक भिल्लमाल चौलुक्य राज्य में न हो कर परमार राज्य के अन्तर्गत था।[2] इसके बाद स्थिति बदली होगी। दुर्लभराज चौलुक्य के इस अभिलेख से (जिसे हम सब सम्पादित कर रहे हैं) यह निश्चित है कि संवत १०६७ में भिल्लमाल चौलुक्य राज्य में आ चुका था। इस का श्रेय संभवतः स्वयं दुर्लभराज को हो।

भिल्लमाल मण्डल का शासन दुर्लभराज ने तन्त्रपाल क्षेमराज को सौंपा, जो इस अभिलेख में महाराजाधिराज दुर्लभराज के 'पादपद्मोपजीवी' के रूप में वर्णित है। पंक्ति २–३ के समस्त पद 'स्वभुज्यमान भिल्लमाल मंडल' से यह भी स्पष्ट है कि दुर्लभराज ने भिल्लमाल प्रदेश को अपने राज्य में सर्वथा अन्तर्गत न कर उसका शासन अपने तन्त्रपाल क्षेमराज को सौंप दिया था। क्षेमराज शायद परमार-वंशी रहा हो।

तन्त्रपाल शब्द का अर्थ विचारणीय है। इसका प्रयोग हमें अन्यत्र भी मिलता है। चालुक्य वंशी अवनिवर्मा द्वितीय (योग) के संवत् ९५६ के अभिलेख में महेन्द्रपाल प्रथम के तन्त्रपाल धीइक का उल्लेख है। उसकी अनुमति से बलवर्मा और अवनिवर्मा ने दान दिए थे।[3] इसी तरह महेन्द्रपाल द्वितीय के उज्जयिनीस्थ तन्त्रपाल महासामन्त दण्डनायक माधव ने चाहमान इन्द्रराज की प्रार्थना पर मीन संक्रांति के दिन धारापदक नाम का गांव इन्द्रादित्य देव की दैनिक पूजादि के लिए दिया था।[4] इस अभिलेख के अन्त में श्री माधव और श्रीविदग्ध की सही है। श्रीविदग्ध को तत्कालीन प्रतिहार सम्राट महेन्द्रपाल द्वितीय का उपनाम मानना ही शायद ठीक होगा। शाकम्भरी के चाहमान राजा विग्रहराज द्वितीय के हर्ष अभिलेख में तन्त्रपाल क्षमापाल का उल्लेख है। सम्राट की आज्ञा से विग्रहराज के पितामह वाक्पति द्वितीय को दण्ड देने के लिए वह

१. देखें मूलराज के बड़ोदा, कड़ी, बालेरा आदि अभिलेख, हेमचन्द्र सूरि का 'द्वयाश्रय–काव्य', 'पृथ्वीराज विजय', और 'प्रबन्ध चिन्तामणि'।

२. देखें एपिग्राफिया इण्डिका, जिल्द २२, पृ० १९६ आदि।

३. देखें वही, जिल्द ९, पृ० १–१०

४. देखें वही, जिल्द १४, पृ० १७६–१८८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपनी विशालवाहिनी सहित चाहमान राज्य की सीमा पर पहुँचा था [1] । 'उपमितिभवप्रपञ्चाकथा' (रचना काल संवत् ९६२) में संतोष राजा सम्यग्दर्शन का तन्त्रपाल है [2] । राजाज्ञाओं का पालन करवाना और राजहित की रक्षा तन्त्रपाल के मुख्य कार्य रहे होंगे [3] । स्वामी की अनुमति से अपने अधिकृत भाग के ग्राम आदि देने का उन्हें अधिकार था ।

वर्तमान अभिलेख के अन्य प्रशासनिक शब्द भाग, भोग, उपरिकर और दशापराध-दण्ड हैं । कृषि में से राजादेय छठे, आठवें, या दसवें भाग की पारिभाषिक संज्ञा "भाग" है । राजा शूकधान्य का छठा, शिम्बीधान्य का आठवां और कुछ वर्षों तक अकृष्ट पड़ी भूमि की उपज का दसवां भाग लेता। फल, मूल, शाक, दधि आदि जल्दी खराब होने वाली वस्तुओं से प्राप्य राजादेय "भोग" कहलाता है । छोटे-मोटे भोगातिरिक्त करों की संज्ञा "उपरिकर" रही होगी । इतिहास के विद्वान अधिकतर भोग और उपरिकर को एक ही मानते हैं । किन्तु यत्र-तत्र इनके पृथक् निदश से इनकी पृथकता का अनुमान किया जा सकता है । राजाज्ञा का लंघन, स्त्रीवध, वर्णसंकरता, परस्त्रीगमन, चोरी, बिना अपने पति के गर्भ, वाक्पारुष्य, अवाच्य, दण्डपारुष्य, और गर्भपात—ये दस अपराध हैं । इन अपराधों के लिए किया हुआ जुर्माना भी ग्राम के प्रतिगृहीता को मिलता । देवपाल के नालन्दा और नारायणपाल के भागलपुर अभिलेख में दाशापराधिक एक राजपुरुष विशेष की उपाधि भी है । वह सम्भवतः ऐसे अपराधों को मालूम कर अपराधियों को सजा दिलवाता । प्रतिगृहीता का स्वामित्व गांव के अन्तर्गत काष्ठ, तृण करंजादि के वृक्ष और गोचर पर भी था । अनन्यस्वामिक भूमि की अनेक प्रकार की आय पर प्रतिगृहीता का अधिकार रहता । अन्य व्यक्ति प्रतिगृहीता को कुछ धन राशि व उपज का कुछ भाग देकर ही इसके प्रयोग के अधिकारी बनते ।

इस टिप्पणी को समाप्त करने से पूर्व सम्भवतः यह बताना भी असंगत न होगा कि भिल्लमाल के स्वामित्व में कुछ समय बाद फिर परिवर्तन हुआ । दुर्लभराज के उत्तराधिकारी भीमदेव प्रथम ने आबू पर अधिकार कर लिया और आबू परमार धन्धुक को कुछ समय तक स्ववश्य परमार भोज प्रथम के यहां जाकर रहना पड़ा । भीमदेव ने अनेक अन्य विजय भी प्राप्त की । किंतु वि० सं० १०६७ और १११७ के बीच में परमारों ने भिल्लमाल पर फिर अधिकार कर लिया । यहां धन्धुक के पुत्र महाराजाधिराज कृष्णराज द्वितीय के दो अभिलेख मिले हैं, एक संवत् १११७ का और दूसरा संवत् ११२३ का । कृष्णराज की मृत्यु के बाद उसका द्वितीय पुत्र सोच्छराज भीनमाल और किराडू प्रदेश का स्वामी हुआ । संवत् १२३५ के लगभग सोनिगरा चौहानों ने भिल्लमाल पर अपना अधिकार स्थापित किया और लगभग सवा सौ वर्ष तक वहां उनका राज्य बना रहा ।

भिल्लमाल समृद्ध व्यापारियों और विद्वान ब्राह्मणों की नगरी थी । यहीं से विनिर्गत अनेक जातियों से राजस्थान और गुजरात के अनेक नगरों की समृद्धि बढ़ी थी । इन ताम्रपत्रों में वर्णित दान का प्रतिगृहीता भी किसी समय भिल्लमाल का निवासी था । कान्हड़दे प्रबन्ध में यह नगर चौहानों की ब्रह्मपुरी

---

१. देखें अभिलेख का सोलहवां श्लोक

२. देखें Rajasthan through the Ages पृ० ३४७, 'उपमितिभवप्रवञ्चाकथा', पृ० ५८२

३. श्री डी० सी० सरकार ने तन्त्रपाल को दानाध्यक्ष और धार्मिक कृत्याध्यक्ष माना है (देखें उनकी 'इण्डियन एपिग्राफी', पृ० ३७३) जो ठीक प्रतीत नहीं होता ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

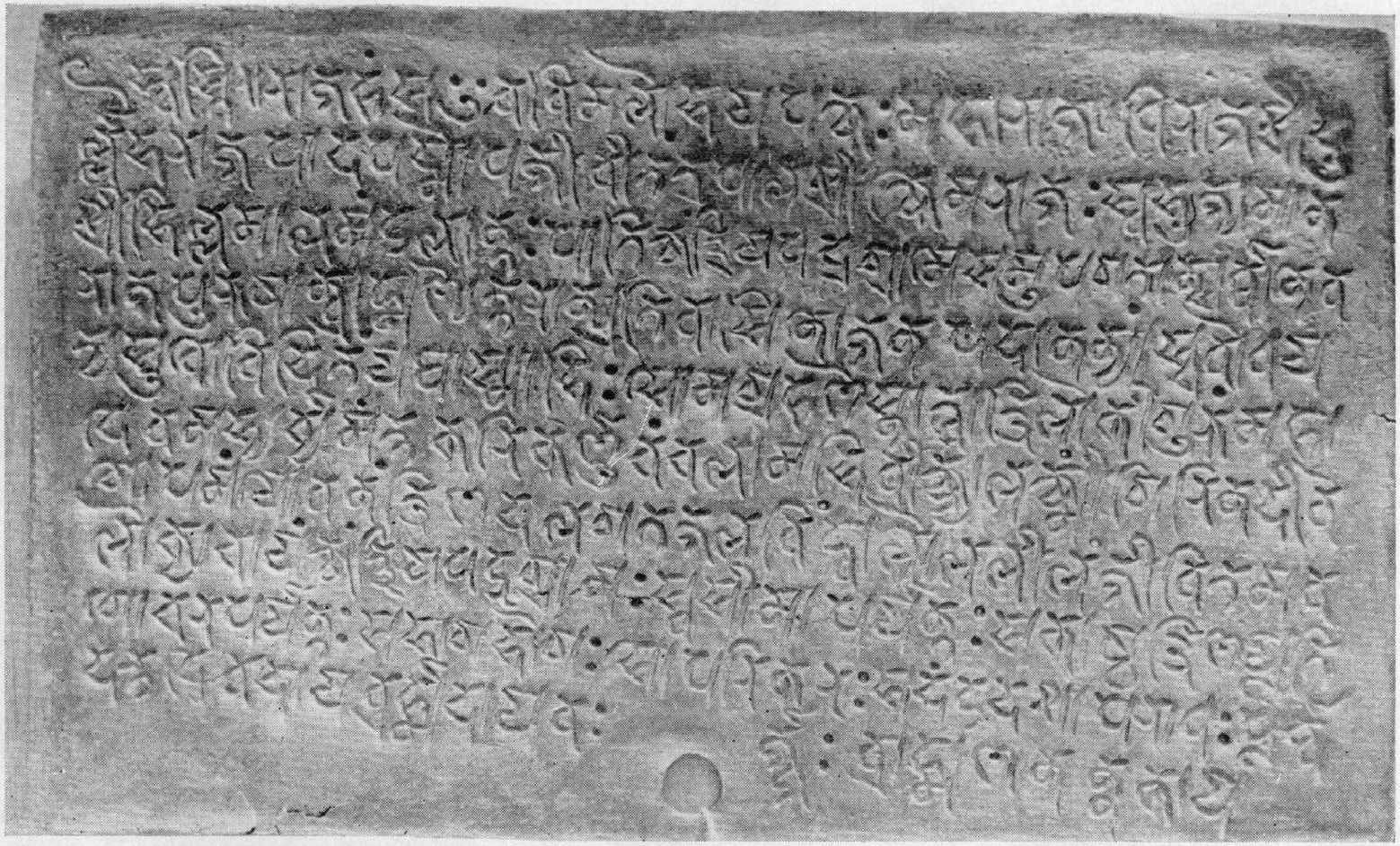

चौलुक्य महाराज दुर्लभराज के समय का दान पत्र (११ वीं शताब्दी विक्रमी)

चित्र–१, पृष्ठ ६१

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

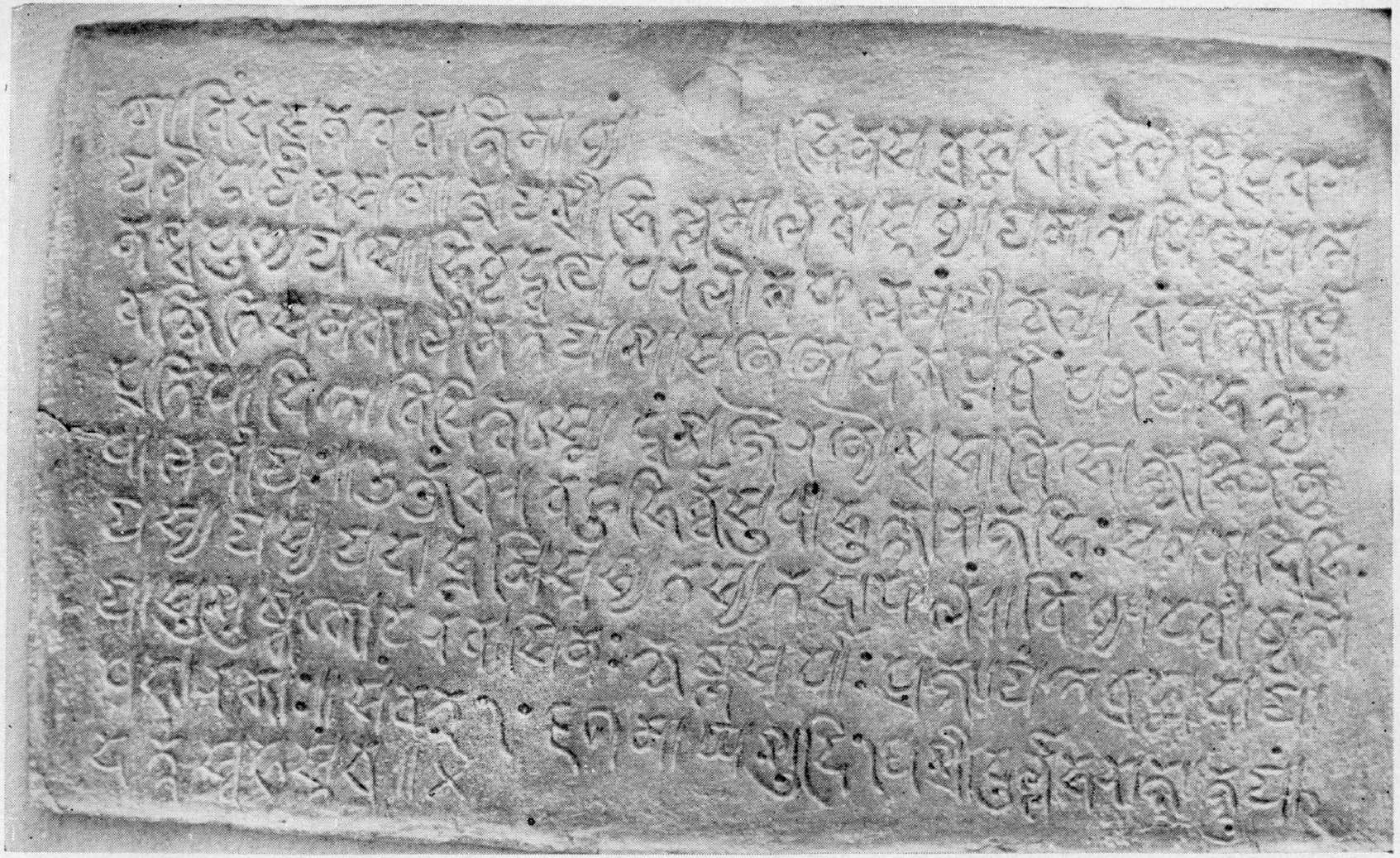

चौलुक्य महाराज दुर्लभराज के समय का दान पत्र (११ वीं शताब्दी विक्रमी)

चित्र–२, पृष्ठ ६१

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

के रूप में वर्णित है। ब्रह्मगुप्त भिल्लमाल आचार्य के नाम से प्रसिद्ध है। यही नगर माघ और उसके वंशजों का अधिष्ठान था। यहीं 'उपमितिभवप्रवञ्चाकथा' का प्रणयन था हुआ। इस नगर से विनिर्गत श्रीमाली ब्राह्मण अब भी अपनी कर्मनिष्ठा के लिए प्रसिद्ध हैं। संवत् १०५४ में इसी गोविन्द के पुत्र नन्नुक को सत्यपुरीय पथक में एक ग्राम दान में मिला था। इसका उल्लेख राष्ट्रीय संग्रहालय के एक दूसरे अभिलेख में है जिसका सम्पादन भी इस टिप्पणी के लेखक ने किया है।

दानपत्र का सम्पादन ताम्रपत्रों के फोटो के आधार पर किया गया है। फोटो इस ग्रन्थ में इसी लेख के साथ प्रकाशित है।

लेख का अक्षरान्तर

पहला ताम्रपत्र

१. ओं स्वस्ति राजहंस इव विमलोभयपक्ष : महाराजाधिराज-श्री-
२. दुर्ल्लभराजपादपद्मोपजीवी तन्त्रपाल श्री क्षेमराजः स्वभुज्यमान-
३. श्री भिल्लमालमंडलान्तः पाति क्षं (क्ष) त्रियपद्ग्रामे समुपगतान् सर्व्वानेव
४. राजपुरुषान् वा (ब्रा) ह्मणोत्तरान् प्रतिनिवासिनो जनपदानन्यांश्च बो (बो) धय-
५. त्यस्तु वो संविदितं यथास्मामिः सौमग्रहणे स्नात्वा त्रिलोकीगुरुं महा-
६. देवमभ्यर्च्य मं (म) तकरिकर्ण्णचंचलामभिवीक्ष्य लक्ष्मीं गिरिनदीवे-
७. गोपम यौवनं त्रि (तृ) णदलगतजल वि (बिं) द्वालोलंभ जीवितमव-
८. लोवय चायं क्षं (क्ष) त्रियपद्ग्रामः स्वसीमापर्यन्तः सकाष्ठ त्रि (तृ) णपूर्ति-
९. गोचरपर्यन्तः सभागभोगः सौपरिकरः सदंडदशापराधः पूर्व्व-
१०. दत्तदेवदाय व्र (ब्र) ह्मदायवः (व) र्ज्जः वा (ब्रा) ह्मणनन्नकाय

दूसरा ताम्रपत्र

११. गोविंदसूनवे वाजिमाध्यंदिन सव् (ब्र) ह्मचारिणे त्रिप्रवरा-
१२. य लौड्य (लाट्या) यनसगोत्राय श्री भिल्लमालवास्तव्याय मातापित्रोरात्म-
१३. नश्च पुण्ययशोभिवृद्धये परलोकफलमंगीकृत्य चंद्रार्काण्णि-
१४. वक्षितिसमकालीनतया शासननौदकपूर्व्वं परया भक्त्या
१५. प्रतिपादितो विदित्वास्मद्वंशजैरन्यैश्च भाविभोक्तृभिरनु-
१६. पालनीयः।। उक्तं च। व (ब) हुभिर्व्वसुधा भुक्ता राजभिः सगरादिभिः
१७. यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलं।। विंध्याटवीष्वतो-
१८. यासु शुष्ककोटरवासिनः कृष्णसर्पाः प्रजायंते व् (ब) ह्मदाया-
१९. पहारकाः।। संवत् १०६७ माघ शुदि १५ श्री दुर्ल्लभराजा नुयं (नुमतं)
२०. दत्तं स्वहस्तं च।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org